स्पष्ट होता है। दुर्भाग्य से वे भारत छोड़ो आंदोलन में प्रत्यक्ष रूप से भूमिका नहीं निभा सके क्योंकि उन्हें जेल में डाल दिया गया व अनेक प्रतिबन्ध लगा दिये गए।

निष्कर्ष

महात्मा गाँधी ने चम्पारण जिले के समाज के नीचे स्तर के पद दलित, उत्पीड़ित एवं उपेक्षित जन समुदाय दशा से द्रवीभूत होकर उनके उत्थान हेतु कल्याण कार्य आरंभ करना आवश्यक समझा। उनके अज्ञान एवं परिस्थिति से उदभूत अस्वास्थ्य कर जीवन को उच्च बनाये बिना समाज का स्थायी हित संभव नहीं था। इसके लिए सच्ची शिक्षा की आवश्यकता का उन्होंने अनुभव किया। गाँधीजी सत्याग्रह को एक क्रमिक विकास के रूप में देखते थे। उनके अनुसार व्यक्ति स्वयं को तप के द्वारा उत्कृष्ट बनाने के लिए निरन्तर कोशिश करता है तथा चेतना के उच्च स्तर को प्राप्त करता है। वह निष्क्रिय प्रतिरोध को गरीबों का हथियार मानते थे और सत्याग्रह को बलवानों का अस्त्र मानते थे। इसमें अहिंसा आवश्यक तत्त्व थी। सत्याग्रह का उद्देश्य सत्य को प्राप्त करना है और उसे किसी भी कीमत पर त्यागा नहीं जा सकता। सत्याग्रह का प्रयोग करने वाला और कानून का विरोध करने वाला हर व्यक्ति परेशानी झेलने को तैयार रहता है।

संदर्भ स्रोत

1. कामेश्वरी चरण सिंहाः मै और मेरी साथी, पृ. 157
2. K.K. Datta: Freedom Movement in Bihar, Vol. I, P. 15.
3. K.K. Datta: Quoted from "Freedom Movement in Bihar, P. 11.
4. डा० सीताराम झा ''श्याम'' : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की रुप रेखा, पृ. 166
5. Pecited by Rabindranath in the specing innocation of the Indian National congress, P. 125.

राष्ट्रीय चेतना के जागृति में बिहार के रियासती घरानों की भूमिका

डॉ. कुमार समर्पण*

सार–संक्षेप

भारतीय रियासतों या देशी राज्यों की स्थापना तथा ब्रिटिश साम्राज्य के साथ उनका सम्बन्ध आधुनिक भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण विषय है। अंग्रेजी शासनकाल में भारत दो भागों में विभक्त था, ब्रिटिश भारत एवं भारतीय देशी राज्य/देशी राज्यों की संख्या लगभग 6 सौ थी। देशी राज्यों के अधीन देश के क्षेत्रफल का 15 प्रतिशत तथा 26 प्रतिशत जनसंख्या थी। इन देशी राज्यों की स्थापना मुगल काल में हुई थी। सर ली. वार्नर के अनुसार 1919 ई. के पूर्व भारतीय देशी राज्यों के प्रति ब्रिटिश सम्बन्ध के तीन युग थे। घेरे की नीति का युग, अधीनस्थ अवस्था की नीति का युग और अधीनस्थ संघ नीति का युग। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम एवं राष्ट्रीय चेतना के जागृति में बिहार के रियासती घरानों के साथ–साथ भारत के लगभग सभी रियासती घरानों का महत्वपूर्ण योगदान है और यह योगदान चिन्तन, चेतना और संघर्ष तक ही सीमित नहीं है अपितु बिन्दु–बिन्दु पर शिलालेख की तरह अंकित है। देश के नरेशों में आपसी फूट, राजनीतिक अदूरदर्शिता, राष्ट्रीयता के भाव की कमी, जाति गत विद्वेष एवं तज्जनित संकीर्णता, तथा व्यक्तिगत स्वार्थ की प्रधानता के कारण भारत वर्ष को विदेशियों की परतन्त्रता की कठिन बेड़ी के बंधन में चिरकाल तक जकड़ा रहना पड़ा था, पर इतिहास इसका साक्ष्य देता है कि उस अवधि में भी वह उस दीन अवस्था से मुक्ति पाने के हेतु सदैव छटपटाता रहा है और समय–समय पर उसके लिये परिस्थिति के अनुकूल संयत भी हुआ। अंग्रेजों के भारत में शासन के आरंभ से एक शादी पश्चात देश में स्वतंत्रता की भावना अति प्रबल हो उठी और उसकी लहर देशों दिशाओं में फैल गयी।

परिचय

भारत के अधिकांश रियासती राजा निरकुंश होते थे और रियासतों के आम नागरिक पिछड़ेपन के शिकार होते थे। रियासतों द्वारा अनियंत्रित शोषण, निरकुंश शासन एवं आर्थिक दोहण की प्रक्रिया बनी रहती थी। वास्तव में भारतीय

*ग्राम+पो.–कोठिया, भाया–माधोपुर, दिधरूआ, प्रखण्ड–ताजपुर, जिला–समस्तीपुर (बिहार), पिन–848122

राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास में बिहार के रियासतों के साथ–साथ भारतीय रियासती घरानों की भूमिका रही है। राष्ट्रीय आन्दोलन में बिहार के रियासती घरानों की भूमिका किसी से छुपा हुआ नहीं है। मिथिला में दरभंगा के महाराज अंग्रेजों की नजर में विद्रोही समझे जाते थे। राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना के संदर्भ में महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह की भूमिका अविस्मरणीय है। महाराजा महेश्वर सिंह ने 1850 ई. से 1860ई. तक राज किया। उनकी मृत्यु के पश्चात् दरभंगा राज प्रतिपालक अधिकरण (कोर्ट आफ वार्डस) की देख–रेख में ले लिया गया। जब ज्येष्ठ कुमार लक्ष्मीश्वर सिंह बालिग हुए तब वे अपने पैतृक सिंहासन पर विराजमान हुए। महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह का शासन काल 1880 से 1898 ई. तक रहा। वे उदार–विचार के लोक–हितैषी नरेश थे। उनके दरबार में अनेक लब्ध प्रतिष्ठ विद्यमानों को प्रश्रय प्रायः सर्वदा मिलता रहा। उनकी उदारता एवं जनप्रियता की अनेक कथाएँ मिथिला की जनता में प्रचलित है। वे विद्या एवं कला के प्रेमी थे। उनके शासनकाल में अनेक प्रजा हित कार्य हुए। अस्पतालों (चिकित्सालयों) एवं विद्यालयों का निर्माण किया गया तथा देव–मंदिर भी बने। भारत रियासतों का देश रहा है तथा 1929 के अंग्रेजी सरकार सभी रियासतों की जो अधि.त सूची प्रकाशित की गई थी उसमें करीब 562 देशी रियासतों के नाम थे और उन रियासतों में स्तरीय भिन्नताएँ थी। इन रियासतों में 160 रियासतें ऐसे थे जिनके राजाओं को तोपों की सलामी दी जाती थी और वे सलामी की रियासत कहलाती थी। देश के अन्तर्गत बड़ौदा, ग्वालियर, हैदराबाद, मैसूर तथा जम्मू और कश्मीर जैसे 127 रियासत बिना सलामी की थी तथा शेष 327 छोटी–छोटी जागीरों के रूप में जानी जाती थी।

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह की भूमिका अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। मिथिला के सपूत महाराजा की राष्ट्रीय भावना से राष्ट्रीय यज्ञ में मिथिला का योगदान भी उल्लेखनीय हो जाता है। बिहार के जगदीशपुर से कुँवर सिंह ने फिरंगियों को खदेड़ना प्रारंभ किया। छोटानागपुर के ठाकुर विश्वनाथ साहदेव, पाण्डेय प्रभूति गणपत राय, शेख भिखारी प्रभूति अनेकानेक वीर स्वतंत्रता का उदघोष करते हुये हँसते–हँसते फाँसी पर झूल गये थे।

कुँवर सिंह ने अपने जगदीशपुर दुर्ग में शस्त्रास्त्र एवं बारूद आदि प्रस्तुत करने हेतु एक कारखाने की स्थापना की तथा 20,000 सैनिकों को छः महीने तक भोजन देने के लिये सामाग्रियाँ एकत्रित कर ली। उत्तर एवं दक्षिण बिहार की जनता की सदभावना, सहानुभूति एवं प्रेम उनको प्राप्त हुआ। इस साशस्त्र क्रान्ति का स्वागत बिहार के अधिकांश अधिवासियों ने हृदय से किया तथा आजादी के दीवाने क्रान्ति के उन सिपाहियों को सतर–काल में खिलाने–पिलाने तथा उनके स्वागत

करने की तैयारियाँ जगदीशपुर से दूर गंगा के दूसरे पार दरभंगा–मुजफरपुर आदि जिलों में भी ग्रामीण जनता प्रसन्न रूप से करने लग गयी, जिसका आँखों देखा वर्णन करने वाले उनके वृद्ध 20वीं शताब्दी के प्रथम चरण के अन्त तक तथा उसके बाद भी विद्यमान थे।

बिहार प्रदेश के वहावियों ने भी स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु आन्दोलन किया था। इस्लाम धर्म की एक शाखा वहावी सम्प्रदाय है। अरब के अब्दुल वाहिक के अनुयायियों को वहावी कहा जाता है। वहावी आन्दोलन के प्रवर्तक सैयद अहमद थे। उनके सिद्धान्त भारतवर्ष को विदेशियों की दास्ता से मुक्त करना था, क्योंकि इस सम्प्रदाय के अनुयायी भारतवर्ष पर अंग्रेजों के आधिपत्य को इसलाम धर्म के विरूद्ध मानते थे। सन् 1828ई. से 1868ई. तक बिहार में वहावी आन्दोलन का केन्द्र पटना में था। पीछे मुंगेर के सूरज गढ़ के मकसूद अली ने उक्त आन्दोलन का नेतृत्व अपने हाथ में लिया। अंग्रेजों ने उस धार्मिक आन्दोलन का भी बड़ी क्रूरता के साथ दमन किया। उस सम्प्रदाय के अनुयायी मिथिला में उस आन्दोलन को चला रहे थे। मो. अहमदुल्लाह को 5 नवम्बर 1864ई. को पकड़ लिया गया। उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली गयी तथा निम्न न्यायालय ने उन्हें फाँसी की सजा दी। किन्तु उच्च न्यायालय ने कालापानी की सजा देकर उनहें अंडमान भोज दिया। जहाँ उनकी तथा उनके भाई मो. यहिया अली की मृत्यु 20 वर्षों के बाद हो गयी। परन्तु इस प्रकार के दमन के बाद भी उस आन्दोलन को अंग्रेज सरकार समाप्त नहीं कर सकी। उनके शिष्यगण आन्दोलन को चलाते ही रहे, जिसमें अनेक मिथिला के निवासी थे। वहावी सम्प्रदाय का राजनीतिक उद्देश्य मूलतः विदेशी साम्राज्य को जड़ से उखाड़ कर फेंकना था।

अंग्रेज सैनिकों के अनुपात में भारतीय सैनिक बहुत कम थे। उस समय कम्पनी के सैनिक 96,000 की संख्या में थे। इसके अतिरिक्त देशी रियासतों के सैनिक भी उनके अधीन और सहायक थे। फिर भी, अल्पसंख्यक भारतीय सैनिकों ने अपेक्षाकृत अधिक जोहर दिखलाया। अंग्रेजों को भी क्रान्तिकारियों की वीरता की सराहना करने के लिये वाध होना पड़ा, क्योंकि संघर्ष करते समय उनके छक्के छूट रहे थे। कुँअर सिंह और लक्ष्मीबाई के समक्ष तो उन्हें अनेक बार नतमस्तक होना पड़ा था। किन्तु यह भी स्वीकार करना होगा कि अंग्रेज सैनिकों को अच्छी सैनिक शिक्षा मिली थी, वे नए शास्त्रस्त्रों के प्रयोग में अत्यन्त कुशल थे।

क्रान्ति के फलस्वरूप शासन कम्पनी से हटकर सीधे ब्रिटिश सरकार के अन्तर्गत चला गया। अब पूर्णतया ब्रिटिश नीति से ही भारत शासित होने लगा। इसके लिये भारत शासन अधिनियम, 1858 पारित हुआ। ऐसा करने से कम्पनी द्वारा शासन व्यवस्था के लिये संगठित बोर्ड आफ कंट्रोल, दी कोर्ट ऑफ प्रोपराइटर्स

और द कोर्ट ऑफ डायरेक्टरस विघटित हो गये। इन इन स्थानों के बदले द सेक्रेट्री ऑफ स्टेट फॉर इंडिया अर्थात् भारत सचिव का पद नया बना। इस सचिव की सहायता के लिये इंग्लैंड में एक परिषद भी गठित की गयी। अब भारत गवर्नर जेनरल ब्रिटिश सरकार बन गया और उसे वायसराय कहा जाने लगा। महारानी विक्टोरिया ने घोषणा की कि भारत में अच्छे शासन प्रबंध के लिये शीघ्र ठोस कदम उठाया जायगा। इस आश्वासन से भारतीयों के असंतोष एवं रोष में कुछ समय के लिए थोड़ा परिवर्तन अवश्य दिखाई परन्तु सन् संतावन की क्रान्ति से भारतीयों का आत्म–सम्मान जाग उठा तथा स्वतंत्रता प्राप्ति में विश्वास जग गया। उन्होंने दृढ़ संकल्प कर लिया कि हम एक–न–एक दिन स्वाधीनता प्राप्त कर के रहेंगे। क्रान्ति ने शताब्दियों से सोये हुये भारतीयों के जीवन से आलस्य को सदा के लिये दूर कर दिया, उन्हें जागरण का अमोध मंत्र मिल गया। देश इस बार ऐसा उठा कि फिर उसने झुकने का नाम न लिया। कुछ त्रुटियों के कारण आन्दोलन तत्काल दब तो गया, पर इससे आगे के लिये क्रान्तिकारियों को प्रेरणा मिली। वे इस बात को जान गये कि हमें अधिक संगठित होकर संग्राम करने की आवश्यकता है। वस्तुतः वह क्रान्ति न केवल अपने तात्कालिक उद्देश्य में सफल हुई, बल्कि एक सर्वतोमुखी व्यापक क्रान्ति को जन्म देने का कारण भी बनी। आगे चलकर जो क्रान्तिकारी–आन्दोलन चला उसका मूल जड़ सन्तावन की क्रान्ति ही है।

अंग्रेजों के अत्याचारों को देखकर भारतीयों को उनके यथार्थ रूप का ज्ञान हुआ। अब वे उन्हें देश से निष्कासित करके ही चैन लेने की बात सोचने लगे। अंग्रेजी संवाददाता जी. डब्लू. रसेल ने लन्दन के ''टाइम्स'' पत्र में लिखा भी था ''हिन्दु सेनानियों और अंग्रेजों के बीच प्रबल द्वेष और दुर्भावना पैदा हो गयी है और इन दोनों में विश्वास पैदा होने की संभावना नहीं है।

1885 ई. में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना के बाद राष्ट्रीय काँग्रेस के नेतृत्व में क्रान्तिकारी आन्दोलन शुरू होने पर ब्रिटिश हुकुमत की कड़ी प्रतिक्रिया उजागर हुई। ऐसे में आन्दोलनकारियों ने भारतीय रियासतों में शरण लेकर भूमिगत आन्दोलन को साकार करने का प्रयत्न किया यहीं से रियासतों में राजनीतिक चेतना आई जिसके फलस्वरूप भारतीय रियासतों में राजनीतिक चेतना का उदय हुआ। 1920–22 तक गाँधीजी द्वारा प्रतिपादित आन्दोलनों में भी रियासती लोगों में जन–संगठन के प्रति सकारात्मक सहयोग देखा गया और इसी के फलस्वरूप हैदराबाद, बड़ौदा, कठियाबाद, इन्दौर, नवीनगर आदि भारतीय रियासतों स्टेट पिपुल कॉन्फ्रेंस का गठन हुआ। इतना हीं नहीं 1927 ई. में अखिल भारतीय स्टेट पिपुल कॉन्फ्रेंस का एक अधिवेशन बम्बई में आयोजित हुआ जिसमें करीब देशी रियासतों से 700 राजनीतिक कार्यकर्त्ता सम्मिलित हुए। श्री बलबंत राय मेहता

तथा श्री मनिकलाल कोठारी, भारतीय स्टेट पिपुल कॉन्फ्रेंस में सर्वसम्मति से नेता चुने गए। भारतीय रियासतों में कतिपय रियासत ऐसे थे जो अंग्रजों के मुलाजिम समझे जाते थे लेकिन कहीं न कहीं इनकी भी भावना भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की भावनाओं के उद्देश्यों से मिलते–जुलते थे और राष्ट्रीय आन्दोलन के कतिपय ऐसे महत्त्वपूर्ण चरणों में उनकी भूमिकाएँ सराहनीय परिलक्षित हुई। इसी क्रम में बिहार के दरभंगा महराजाधिराज घराना, टिकारी महाराज, बेतिया महाराज, डुमराव घराना, नरहन घराना, सुरसंद घराना, सोनवर्षा घराना, बगोदर घराना, बनौली घराना, गिद्धौर घराना, दरभंगा नगर के राय साहब एवं खाँ साहब की रियासतें इत्यादि के सहयोग, निष्ठापूर्ण भागीदारी, आर्थिक मदद ने राष्ट्रीय आन्दोलन को उजागर किया और यह आन्दोलन एक जन आन्दोलन का रूप ग्रहण कर सका।

अंग्रेजों ने जिस तरह से भारत का अतिक्रमण किया और औपनिवेशिक सत्ता स्थापित करने के लिए जो नीतियाँ अपनायी गईं उनके चलते इस उपमहाद्वीप के 25 वें हिस्से पर भारतीय राजाओं, महाराजाओं का ही शासन कायम रहा। ये देशी रियासतें छोटी–बड़ी सभी प्रकार की थीं। इन रियासतों में एक सामान्य बात यह थी कि ये सभी रियासतों अंग्रेजी हुकुमत की संप्रभुता मानती थी। इन देशी रियासतों के साथ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सम्बन्ध कैसे थे तथा भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस ने इन रियासतों के प्रति समय–सयम पर किन नीतियों का प्रतिपादन किया है।

भारतीय रियासतों या देशी राज्यों की स्थापना तथा ब्रिटिश साम्राज्य के साथ उनका सम्बन्ध आधुनिक भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण विषय है। अंग्रेजी शासनकाल में भारत दो भागों में विभक्त था, ब्रिटिश भारत एवं भारतीय देशी राज्य/देशी राज्यों की संख्या लगभग 6 सौ थी। देशी राज्यों के अधीन देश के क्षेत्रफल का 15 प्रतिशत तथा 26 प्रतिशत जनसंख्या थी। इन देशी राज्यों की स्थापना मुगल काल में हुई थी। सर ली. वार्नर के अनुसार 1919 ई. के पूर्व भारतीय देशी राज्यों के प्रति ब्रिटिश सम्बन्ध के तीन युग थे। घेरे की नीति का युग, अधीनस्थ अवस्था की नीति का युग और अधीनस्थ संघ नीति का युग। 1857 ई. की क्रांति भारतीय देशी राज्यों और ब्रिटिश भारतीय सरकार के सम्बन्धों के इतिहास में एक युगांतकारी घटना थी। इस क्रांति में देशी राज्यों का महत्वपूर्ण योगदान रहा था। डलहौजी के हड़प नीति के कारण देशी नरेश अत्यन्त क्षुब्ध एवं कुपित थे। 1858 ई. में महारानी विक्टोरिया ने घोषणा किया कि भविष्य में ब्रिटिश सरकार देशी राज्यों को अपने साम्राज्य में नहीं मिलायेगी। कम्पनी के साथ उनके जो भी समझौते पहले हुए, ब्रिटिश सरकार भी उसका सम्मान करेगी। परंतु इस समझौते का कतय यह मतलब नहीं था कि देशी राज्यों पर सरकार का नियंत्रण समाप्त हो गया। वास्तविकता यह थी कि 19वीं शदी के उत्तरार्द्ध में यह नियंत्रण

और भी बढ़ गया। ब्रिटिश सरकार के साथ कोई देशी राज्य समानता का वर्ताव नही कर सकता था। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में देशी नरेश को कोई अधिकार नही था। इस क्षेत्र में ब्रिटिश सरकार ही उनका प्रतिनिधित्व करती थी। प्रत्येक देशी राज्यों में एक ब्रिटिश रेजीडेन्ट रहता था। कहने को तो वह परामर्शी था परंतु वास्तविक शासक वही होता था। देशी नरेश को उसकी राय माननी ही होती थी। यद्यपि देशी नरेश असंतुष्ट थे, परंतु वे ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध नहीं जा सकते थे, लेकिन देशी राज्यों के प्रजाओं में देर से ही लेकिन राष्ट्रीयता की भावना का उदय हुआ और वे स्वतंत्रता के लड़ाई में शामिल हुए।

भारत के देशी रियासतों में राष्ट्रीय आंदोलन अपेक्षाकृत विलम्ब से शुरू हुआ था। इसका मुख्य कारण, उन रियासतों के शासक भारतीय थे लेकिन ये शासक अंग्रेजों की तुलना में अधिक क्रूर एवं कठोर थे। भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस एवं उसके प्रमुख नेता महात्मा गाँधी एवं जवाहर लाल नेहरू ने इन देशी रियासतों के प्रजाओं के बेचैनी को महसूस किया और उन्हें आंदोलन करने को प्रेरित किया।

इस्ट इण्डिया कंपनी ने भारत में एक विशाल राज्य की स्थापना की थी। इस साम्राज्य को ब्रिटिश भारत के नाम से जाना जाता है परंतु यहाँ यह ध्यातव्य है, सम्पूर्ण भारतीय भू–भाग ब्रिटिश शासन के अधीन नहीं था। देश का बहुत सारा क्षेत्र, देशी राजाओं के द्वारा शासित था। इन्हीं क्षेत्रों को देशी रियासत के नाम से जाना जाता है। यद्यपि देशी रियासतों की संप्रभुता बरकरार रही परंतु कालांतर में उन्हें ब्रिटिश शासकों की अप्रत्यक्ष अधीनता स्वीकार करनी ही पड़ी। ब्रिटिश सर्वोच्चता की स्थापना कई चरणों में पूरी हुई। इस नीति के अनुसार देशी राज्यों को अधीनस्थ राज्य का दर्जा प्रदान किया गया तथा उनकी सुरक्षा ब्रिटिश सरकार के जिम्मे रही।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय देशी रियासतों में राष्ट्रीय आंदोलन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का स्वर्णिम अध्याय है। चूँकि देशी राज्यों के मालिक भारतीय वे अतः उनसे यह अपेक्षा की जाती थी कि वे अपने राज्यों में लोकहितकारी कार्य करेंगे। परंतु स्थिति ठीक इसके विपरीत थी। एक तरफ काँग्रेस भारत के सभी वर्ग, धर्म एवं जातियों के लोगों में राष्ट्रीय भावना का संचार कर उन्हें एक प्लेटफॉर्म पर लाने का प्रयास कर रही थी, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ समग्र एकीकरण का प्रयास कर रही थी, परंतु यह आसान कार्य नहीं था क्योंकि देशी राज्यों के राजे–महराजे के शासन में लोग शासित एवं पीड़ित थे।

संदर्भ सूची

1. डी. एच. बुकानन, 'द डेवलपमेंट ऑफ कैपिटेलिस्ट एन्टरप्राइज इन इंडिया', पृष्ठ 20.
2. वी.वी. सिंह द्वारा संपादित 'इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया' 1857–1956 में जे.एस. सिन्हा का 'डेमोग्रैफिक ट्रेन्डस' शीर्षक लेख, पृष्ठ 14–16.
3. टिप्पणी, मल्होत्रा ब्रदर्स का उद्धरण, भारत ईयर बुक, 1951, दिल्ली 1952, पृष्ठ 24.
4. जी. वी. जठार और एस. जी. बेरी, 'इंडियन इकोनोमिक्स', खंड 1 (नौवां संस्करण, 1949), पृष्ठ 12–18.
5. ली वार्नर, द नेटिव स्टेट ऑफ इण्डिया, 1910, लंदन, पृ. 26–37
6. राम लखन शुक्ल, आधुनिक भारत का इतिहास, दिल्ली, 2002, पृष्ठ संख्या 70
7. तदैव, पृष्ठ संख्या, 10–16
8. ए. सी. बनर्जी, एंग्लो सिख रिलेशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 88
9. बी. एल. ग्रोवर, यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास, दिल्ली 2001, पृष्ठ संख्या 147